तीर्थंकर महावीर और आधुनिक युग में शिक्षा का महत्व

—डॉ॰ कामता प्रसाद जैन—

"किं जानासि न वीतरागमखिलत्रैलोक्य चूडामणिं,
किं तद्धर्म समाश्रितं न भवता किं वा न लोको जडः।
मिथ्यादृग्भिरसज्जनैर पटुभिः किंचित्कृतोपद्रवात्,
यत्कर्मार्जन हेतुमस्थिरतया बाधां मनो मन्यसे ॥"

—श्री पद्मनन्दि

हे मन ! तुम क्या पूरे तीनों लोक में चूड़ामणि के समान श्रेष्ठ एक वीतराग जिनको नहीं जानते हो ? क्या तुमने वीतराग कथित धर्म का आश्रय नहीं लिया है ? क्या जन समूह जड़ अर्थात् अज्ञानी नहीं ? जिससे कि तुम मिथ्या-दृष्टि एवं अज्ञानी पुरुषों के द्वारा किये गये थोड़े-से भी उपद्रव से विचलित होकर बाधा समझते हो जो कि कर्मास्रव का कारण है।"

आधुनिक लोक के लिए आचार्य श्री की उपरोक्त वाणी एक युग चेता भविष्य वाणी से कम नहीं है। औरों की बात तो दूर रही, स्वयं जैनों को लीजिए तो उनमें भी वीतराग जिनेन्द्र-चाहे वह भ॰ ऋषभ पहले तीर्थंकर हो

भगवान अंतिम तीर्थङ्कर भ. महावीर– को सही मान में जानने और मानने वाले कितने हैं? कितने हैं एसा युग जो आस्था के साथ सदाचार को नियमित पढ़ने के समान वीतराग वाणी को पढ़ते हो? दुनिया के लोग आज तो हैं वे भोग विलास में अंध होकर भोग सामग्री बढ़ाना ही जीवन का ध्येय मान बैठे हैं। भौतिक उन्नति करना ही आज के वैज्ञानिकों का चरम लक्ष्य है। वे आत्मा और उसकी अनन्त शक्ति से अनभिज्ञ हैं। यही कारण है कि वे राष्ट्रवाद के चक्कर में फंसकर अपने ही पड़ोसियों पर भी आक्रमण करने की धृष्टता करते हैं। उनको इस उपद्रव से विचलित होने की आवश्यकता नहीं परन्तु आश्चर्य है कि आज अध्यात्मवादी भारत के निवासी भी इस उपन्यास से भयभीत हो रहे हैं। आत्म बल जगाने की सुध किसी को नहीं सभी पाशविकता की ओर कदम बढ़ा रहे हैं। ऐसी भयंकर स्थिति में वीतराग प्रभु और वीतराग विज्ञानता को जानने और मानने की अतीव आवश्यकता है। जिनेंद्र प्रभु और जिनेंद्र वाणी का सच्चा ज्ञान ही मानव को जीवन पथ में सही मार्ग सुझाता और सफल बनाता है। तभी तो आचार्य जिनेंद्र की जय का घोष करते हैं।

"जयति जिनो धृतिधनुषामिषुमाला भवति योगियोद्धा-
नाम्।
यद्वाग्रूपा मय्यपि मोहरिपु प्रहृतये तीक्ष्णा॥"

'जिन भगवान् की वाणी धीरतारूपी धनुष को धारण करने वाले योगिजन रूपी योद्धाओं के लिए बाण पंक्ति के

समान होती है तथा जिसकी वह वाणी ज्ञानमयी जीवन की
मोहरूपी भव को पार करने के लिए सदृश जलयान का
काम करती है वह जिन भगवान् जयवन्त होवें।

क्या उनका आदर्श लोक हितकर है ?

महावीर जयन्ती जैसे त्यौहार हम अपने पूर्वजों के
आदर्श जीवन की पुण्य स्मृति में ही मनाते हैं। किन्तु ऐसे
उत्प्रेरक अवसरों पर भी हमारे बहुत से भाई धर्मचिन्तन से
वंचित रहते हैं। उनका हृदय प्रश्न करता है वह पूछता है कि
क्या महावीर और उनका सिद्धान्त जीवन कला के विकास
में सही मार्ग सुझाने में समर्थ है ? क्या उनसे इस युग की
समस्याओं का हल सम्भव है ? जब चारों ओर जीवन अपने
पैने दांत दबोचने का फाड़ रहा है तब क्या महावीर की
अहिंसा हमारी रक्षा कर सकेगी ? हम स्वयं इसका उत्तर
कुछ नहीं देना ठीक समझते हैं, क्योंकि इसका उत्तर बड़े २
महापुरुष यों देते हैं कि भ० महावीर का आदर्श जीवन
और उनके सिद्धान्त आज भी जीवन में आगे बढ़ाने के लिए
मार्ग दर्शन करने में समर्थ हैं। भारत के प्रथम गणतन्त्र
राष्ट्रपति स्व० श्री राजेन्द्र प्रसाद जी ने कहा था कि आज
कल दुनिया के लोगों की रुचि जैन विचार धारा के अनु
कूल है और जैसे कि प्रधान मंत्री नेहरू जी ने भी कहा
था "कि यदि जैन सिद्धान्तों को हमने मान्यता नहीं दी
तो दुनिया का बड़ा अहित होगा। अतः यह और भी
आवश्यक हो गया है कि सभी जैन साहित्य को प्रकाश में
लाकर जनता के समक्ष पठन पाठन के लिए रक्खा जाय

जिससे कि जन जीवन उसके अनुरूप बन सके।" इसी बात को डॉ० राधाकृष्णन ने निम्न शब्दों में व्यक्त किया था। उन्होंने कहा था कि 'यदि मानवता को विनाश से बचाना है और कल्याण के मार्ग पर चलना है, तो भ० महावीर के संदेश को और उनके बताये हुए मार्ग को ग्रहण किये बिना कोई रास्ता नहीं है।"

दिवंगत म० गांधी ने मार्मिक शब्दों में कहा था कि "अहिंसातत्व को यदि किसी ने भी अधिक से अधिक विकसित किया हो, तो वे महावीर स्वामी थे। मैं आप लोगों से विनती करता हूं कि आप महावीर स्वामी के उपदेशों को पहिचानें उस पर विचार करें और उनका अनुसरण करें।

भ० महावीर के भक्तों का यह प्रमुख कर्तव्य है कि वे स्वयं उनके सिद्धान्तों का अध्ययन करें और उन्हें जीवन में उतारें— उनके सिद्धांतों को आधुनिक शैली में लोक की प्रत्येक भाषा में प्रकाशित करके फैलावें, जिससे लोक का कल्याण हो। उनसे शंका करने के लिए गुंजाइश ही नहीं है, क्योंकि न केवल इस युग के महापुरुषों ने उनकी महत्ता का बखान किया, बल्कि इसलिए भी कि भ० महावीर सर्वज्ञ और सर्वदर्शी महापुरुष थे।

सर्वज्ञ और सर्वदर्शी जीवन मुक्त परमआत्मा बनने का आदर्श।

भ० महावीर की जीवात्मा ने ववभी तीर्थंकर का पद सहज ही नहीं पा लिया था। एक समय था जब उनका जीव

एक शिकारी भील था—पूर्ण हिंसक थी उसकी वृत्ति। किन्तु उसी जन्म में उसने अहिंसा का बीज अपने अंतर में बो लिया। भील सदा था शिकार करते पशुओं का, किन्तु शिकार हो गया उसके अंतर में पशु का— जैन मुनि से उसने जीव दया पालन का व्रत लिया—वह किसी को मारेगा नहीं और निरामिष भोजन करेगा। अहिंसा का यह बिरवा उस भील के हृदय में पनपा परन्तु एक जन्म में उसपर फिर हिंसा का तुषार पड़ गया— आदि काल का कुसंस्कार चमक गया तब वह एक भयंकर शेर था— शिकार करना उसका काम था। किन्तु पुण्य मिटता नहीं—अहिंसा के बिरवा की जड़ फिर हरी हो गई। शेर को मुनि के दर्शन हुए और अहिंसक वह बन गया। आज जैसे अमेरिका में टायग नाम की सिंहनी जीव दया पालक शाकाहारी बनी थी वैसे ही शेर वह भी, पूर्ण अहिंसक बना था।

आदि तीर्थंकर भ० ऋषभ अथवा वृषभ से भी बहुत पहले भ० महावीर के जीव ने अहिंसा धर्म की साधना प्रारम्भ की थी। आदि भगवान् का तो वह पोता हुआ था। उपरान्त उत्थान-पतन की भूलभुलैया में भ्रमण कर वह हुआ था, फिर उसने आत्मोन्नति का प्रयास प्रारम्भ किया। अच्छे कर्म का फल भी अच्छा होता है आम बोने पर आम ही मिलता है अहिंसा का फल पाना था उसको। पुण्य पुञ्ज चक्रवर्ती जैसी विभूति में परिणत हुआ किन्तु महावीर

के बीज को आगे बढ़ाता था-उनके हृदय में आत्म बोध का दृग मिल चुका था विशुद्ध सम्यक्त्व की सुगंधि आ रही थी। विराग का भाव आत्मरता में चमक रहा था। वह राज्यराग में नहीं फंसे। उनकी सम्पत्ति जीव कल्याण के लिए थी और उनका समय और शक्ति अहिंसा के विकास में लगी थी। राग द्वेषसे निर्लिप्त रहनेकी आत्मस्थल मधुरता और समानता का भाव जग रहा था। मैत्री और करुणा उनके अन्तर में व्याप्त थीं। वह जिस दिन चक्रवर्ती हो गए परन्तु सम्यक् ज्ञान। इस तरह भूमि पर अहिंसा का साम्राज्य स्थापित हो गया। वह धर्म विजय की यात्रा पर निकले जिसमें सब युद्ध अहिंसक थे और वे आते सभी स्वतन्त्र होकर अहिंसा संस्कृति के उपासक बन जाते। दिग्विजय करके मैत्री और वात्सल्य की सुगन्ध बहाकर लौटे तो वह राजत्व का ऐश्वर्य छोड़ने लगा। बन्धन मात्र से मुक्त होकर वह साधु हो गए। कर्म पूरे नाश ही न हुए घम दूर बन गए। उनकी भगवान् के सान्निध्य में बढ़कर उनके जीवन तीर्थंकर बनने की कला का भावना-उस कलाके विकासमें मूल मे रख सारे कारणोंका अदल रोग से ऐसा चमकाया कि उनको तीर्थंकर होने देर न लगी। स्वर्ग के भोग विलास में भी वह आत्मरत रहे। आत्मा स्वच्छ था। शरीर भी स्वस्थ। स्वर्ण के संसर्ग से पाषाण चमकता ही है। आखिर उस बीज के जीव ने अपने अन्तर को ऐसा मांजा कि राग द्वेष परक हिंसा की गंध भी उनमें न रहा। सहज आर्जवता के भाव ने बीज के जीव को

साक्षपुरुष बना लिया । अब जो बड़े बनना चाहते हैं उन्हें साधना और श्रमकी अग्निमें तपकर अपनेको समर्थ बनाना ही उपादेय है । युद्ध करने से कोई बड़ा नहीं बनता— बड़े बनने के लिए तो अहिंसा का मार्ग है— तप त्याग का पथ है । महावीर ने भी तो त्यागकर तपकर अपने को महान् बनाया ।

महावीर जन्म से ही महान् थे । उनका आत्मा भी महान् था और शरीर भी महान्, सुन्दर और बलवान । देखा गया कि रक्त भी उनकी नाड़ियोंमें श्वेतरक्तकी धारा— दूध जैसा श्वेत गोरस और प्रेमपूर्ण रक्त ! क्योंकि वह साकार मातृ-वत्सलता की दया मूर्ति थे ! और ऐश्वर्य की वर्षा तो उनके जन्म होने के पहले से ही हो चली थी— कुण्डग्राम ऐश्वर्य धाम हो गया । ज्ञातृवंशी क्षत्रियों के अधिनायक सिद्धार्थ और रानी त्रिशला प्रियकारिणी के सौभाग्य की कोई सीमा । नहीं चैत्रशुक्ला त्रयोदशी ई० पू० ५९९ में त्रिशला ने जो पुत्र जना वह वर्द्धमान कहलाया और अपने कार्य के कारण महावीर के नाम से प्रसिद्ध हुआ ।

वर्द्धमान के जन्म से विशाला नगर की छवि भी मानो बढ़ गई । लोक में खुशी की लहर दौड़ गई । मनुष्य ही नहीं देवता भी दर्शन करने के लिए दौड़कर आए । बड़ा उत्सव मनाया उन्होंने । हिमालय के ऋषि संत भी अपनी समाधि भंग करके आकाश से उतरकर कुण्डग्राम आने जाने लगे थे । और आकाश से दर्शन करते हुए उनकी

शङ्कायें दूर हो गई। संयम और विनय में शान्ति समायी और बाल्यकाल समुज्वल भविष्यकी भावना की।

बालक महावीर ने आठ वर्ष के होने तो जीवन का मार्ग संजोदेने का संकल्प किया। उन्होंने किसी को पीड़ा न पहुँचाने और सबके साथ मैत्री और करुणा का व्यवहार करने का नियम लिया सदा सच और मीठे वचन बोलेंगे। बिना उनकी अधिकारी और सम्पत्ति का अपहरण नहीं करेंगे। ब्रह्मचर्य में निःशङ्क रहेंगे। परिग्रह का पाट नहीं बांधेंगे। संग्रह करना पाप है। सचो यदि बालक महावीर को आत्मा और शरीर के मर्म का भान था। वह अपनी अमरता में मगन थे।

उनके बालपन में सभी धर्मों के मैत्री-सम्बन्ध साथ उनका समभाव था। निडर और निर्भय वह ऐसे थे कि एक काल विषधर का पराजित कर दिखाया। माता उन्होंने काल को जानने की योग्यता की हो। प्रजावत्सल इतने थे कि उसके कष्टों को निवारण करने के लिए बड़ी से बड़ी जोखम उठा लेते। राजा का हाथी मस्त होकर प्रजा को मारने लगा तो राजकुमार वद्धमान तुरन्त खाली हाथ भी आगे प्रेम से हाथी को वश में कर लिया। काम के हाथी को भी तो उन्होंने नन्हीं सी उमर में वश किया था।

माता ने कहा—'वत्स! तुम युवा हुए, विवाह करो। कलिङ्ग की राजकुमारी यशोदा तुम्हारे ही अनुरूप है।' सुना तो राजकुमार का माथा ठनका। विवाह क्यों? क्या संसार से कामुकता और हिंसा मिट गई? तीर्थंकर

विकसित कर लिया था। मौन रहकर भी वह अपने आन्तरिक मनोबल तथा प्रभाव से जन जन की कष्टदायक विषमताओं का अन्त करने में संलग्न हुए थे। उनके शरीर से ऐसा तेजोमई प्रभामण्डल उद्भूत हुआ करता कि उनकी छाया में जो भी आता वह वैर और विरोध को खो बैठता था। चण्डकौशिक जैसे भयंकर नाग के आतंक से लोगों की रास्ता बन्द हो गई थी। हो सकता है कि चण्डकौशिक नाग जाति का भयंकर सरदार हो। आर्यों और नागों में संघर्ष चलता ही था। भ० महावीर ने सुना तो वह उसके रास्ते में ही गये चण्डकौशिक ने उनपर आक्रमण किये परन्तु महावीर शान्त थे नाग के आक्रमण विफल गए उसने वैर भाव छोड़ दिया। जन जन के लिए मार्ग बंद था वह खुल गया। जनता ने प्रेम की समभाव की अजय शक्ति को पहिचाना। इसी प्रकार भ० महावीर ने लाढ़ देश की अनार्य पल्ली में जाकर उनके जातिगत द्वेष भाव का अन्त उनके अत्याचारों को समता से सहन करके किया था। भ० पार्श्वनाथ ने पहले ही अङ्ग बङ्ग आदि देशों के अनार्यों को अहिंसा धर्म का अनुयायी बना लिया था। भ० महावीर ने मानव एकता के इस महतो कार्य में चार चांद लगा दिये।

एक बार साधक महावीर कौशाम्बी के बाहर यमुना तट पर ध्यान में लीन खड़े हुए थे तभी उन्होंने देखा- मानव मानव में जन्मतः कोई अन्तर नहीं। किन्तु बलवान सगर्व दीन हीन असमर्थों को क्रीत दास बनाकर उनको

मनमाने त्रास दें यह मानवता नहीं। अतः भ० महावीर ने कौशाम्बी में आकर किसी भी उच्च जातीय व्यक्ति के यहां आहार नहीं लिया बल्कि एक कीतदासी के हाथ से भोजन लिया जिसकी सराहना देवों ने भी की। कौशाम्बीनरेश भी प्रभावित हुए- उन्होंने अपने राज्य में दास प्रथा का अन्त कर दिया। धीरे २ इस नृशंस विषमता का अन्त सारे भारत से हो गया। मौर्यकाल में जब यूनानी राजदूत मैगास्थनीज भारत में आया तो उसे यहां कोई दास देखने को न मिला- सभी मुक्तमानव थे। किसी को दास न बनाने का नियम बना दिया गया था। ("The law ordains that no one among them shall, under any circumstances be a slave")

इस प्रकार अपनी बारह वर्षों की मौन साधना में महावीर ने न केवल अपने अन्तर को मांजने के लिए बड़े बड़े उपवास और तप किए बल्कि साधना के मार्ग में जहां जहां तक जो विषमता दिखाई दी उसका अन्त भी अपनी आदर्श करनी से कर दिखाया मनोविज्ञानिक मुताबिक, यूं महावीर ने एक महती सामाजिक क्रांति को सहज में सफल कर दिखाया। यह उनके साधक जीवन की महान् सफलता और मानवता की बड़ी देन है।

बारह वर्ष का तपस्या काल पूरा हो चला था कि महावीर की साधना सफल हुई। जृम्भिका ग्राम के पास ऋजुकूला नदी के तट पर वह साल वृक्ष की छाया में बैठ

हुए शुक्ल ध्यान के निमग्न आत्मोत्थ में भगवान् थे तभी उनको शरीर आसक्ति के बन्धन तड़ तड़ करके टूट गए पुद्गल का आवरण उनके आत्म स्वभाव पर पड़ा हुआ था वह दूर हो गया मोह का परदा बिल्कुल हट गया- वह केवल ज्ञानी हो गए। शरीर ने भी अगुरुलघुता को प्रकट करके आसन से चार अंगुल ऊपर अधर रहकर मानो प्रत्यक्ष घोषणा कर दी कि महावीर जीवन मुक्त परमात्मा हो गए हैं।

जिसको भीतर ग्राम में भ० महावीर की आत्मा में अहिंसा धर्म का जो बीज बोया था वह १२ वर्षों की साधना के पश्चात् प्रकट हुआ। वह आत्मा से परमात्मा बने- नर से नारायण हुए। उनका परमात्मा बनने का अर्थ। जीवन इस सबके लिए मुक्ति के मार्ग को स्पष्ट दर्शन धारा है।

साधक महावीर अब तीर्थंकर महावीर हो गए-सर्वज्ञ और सर्वदर्शी परम आत्मा। उनका आदर्श बताता है कि परमात्मा दूर नहीं, उनके जीवात्मा में अन्दर विद्यमान है।

इन्द्र स्वर्ग लोक से ज्ञान कल्याणक का उत्सव मनाने आया और तीर्थंकर प्रभु से धर्म चक्र प्रवर्तन के लिए विहार करने की प्रार्थना की। किन्तु व्यर्थ। भगवान् मौन थे उनकी वाणी न खिरी। इन्द्र ने ज्ञान नेत्र से दुनिया को देखा तो उसे हिंसा से भरा पाया। मानव धर्म के नाम पर निरीह निरपराध पशुओं को अग्नि वेदी पर होम कर उनके साथ अन्याय कर रहा था। धार्मिक लोगों के मान

में ही इस दिखावटी धर्म की पूजना बढ़ा था। सर्वत्र असन्तोष और अन्याय। इन्द्र ने यह देखा कि इन्द्रभूति गौतम इन रक्त रंजित यज्ञों का नेता है। वह स्वयं समझ है अतः इन्द्र भूति को भगवान के समक्ष लाया।

इन्द्रभूति के आते ही भगवान की वाणी खिरने लगी। घट घट के ज्ञाता भ० महावीर ने इन्द्रभूति की मर्म वेदना का ज्ञान कर कहा —

इन्द्रभूति! अपने को जानो और पहिचानो आत्मा के अस्तित्व में शंका मत करो जिसे 'अहं' का बोध होता है वही तो चेतन्य आत्मा है। वह दर्शन ज्ञान गुण का शाश्वत द्रव्य है जड़ वस्तु शरीर से निराला है वही तुझ में और वैसा ही आत्मा उन पशुओं में भी है जिनको तू यज्ञ में होमता है।

इन्द्रभूति ने जो यह सुना तो उसे बोध हुआ कि पञ्चभूत पदार्थों से शरीर बनता है ज्ञाता दृष्टा आत्मा शरीर नहीं- वह अजर अमर है तो क्या पशुओं का होमना अनुचित है?

इन्द्रभूति प्रबुद्ध हुए और भ० महावीर के पहले शिष्य हुए। उनके दोनों भाई अग्निभूति और वायुभूति भी अपने शिष्यों सहित भ० महावीर के शिष्य हो गए। परिणामतः पशुयज्ञ की कुप्रथा का अन्त हुआ और पशुओं को भी त्राण मिला। सब ओर अहिंसामयी सुखद वातावरण अवतरित हुआ।

भ० वीर का विश्वव्यापी प्रभाव

भ० महावीर की धर्म सभाएं राजगिरि के निकट विपुल आदि पर्वतों पर अनेक बार हुई। मगधनरेश श्रेणिक बिम्बसार उनके अनन्य भक्त थे।

एक दफा राजगिरि में म० गौतम बुद्ध भी ठहरे हुए थे। उस समय उनके शिष्यों ने आकर कहा कि निर्ग्रन्थ (जैनों) के आम्नेय तीर्थंकर ज्ञात पुत्र महावीर हैं जो लोग ऋषिगिरि पर तपस्या करते हैं। उनके तीर्थंकर सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हैं। (मज्झिमानिकाय १।०९)

बौद्ध ग्रंथ 'दीर्घनिकाय' में भी भ० महावीर को साक्षात् तत्त्ववेत्ता लिखा है।

भ० महावीर के महान् व्यक्तित्व की प्रसिद्धि दूर देशों में फैल गई। सारे भारत में उन्होंने विहार और प्रचार किया था।

ईरान के राजकुमार अरदराक (आर्द्रक) ने सुना तो वह भारत आये और भ० का उपदेशामृत पान करके शिष्य हो गए। ईरान में सम्भवतः उन्होंने ही अहिंसा धर्म का प्रचार किया। भ० अरदरत के अनुयायियों ने भी पशुबलि

प्रथा का अन्त कर दिया। शाह दारा महान ने अशोक की तरह ही धर्मलेख उत्कीर्ण करके अहिंसा धर्म का प्रचार किया। ईरान में अहिंसा की एक परम्परा ही चल पड़ी— फलस्वरूप मामशाद के सूफी कट्टर अहिंसावादी हो हुए। उनमें से एक रहस्यवादी सूफी कवि जीव रक्षा के लिए अपने शेर दाशिया में कहते हैं —

'आहिस्ता खिराम बल्कि मा खिराम!
जेरे कदम तो हजार जाँ अस्त !!'

'आहिस्ता से चलो, बल्कि चलो ही नहीं तो और भी अच्छा है, क्योंकि तेरे पैर के नीचे हजारों जानदार प्राणी हैं।'

मनु महाराजने [illegible] के नियममें यही तो उपदेश दिया था।'

एक दूसरा कवि अहिंसा धर्मको नहीं पालने से कितना कष्ट उठाना पड़ता है यह एक बकरी से कहलाता है —

'जुनीदा अम कि बक्साब गोसफंद गुफ्त
दरां जमां कि निहादश बहल्क तेग़ बुराद।
सज़ाए हर ख़ास-ओ-ख़ारे कि खुर्दः बूद,
कसे कि पहलुए चरबम बुरद ने खरीदम॥'

कवि कहता है कि एक दफा मैंने सुना, कि बकरीकी गरदन पर जब कसाई ने तेज छुरी का वार करना चाहा तो बकरी ने उससे कहा भाई मैं तो सोच रहा हूँ कि हरी घास और हरे पौधे खानेकी सजा मुझे क्या मिल रही है? अरे, मेरी गरदन ही काटी जा रही है। अब फैसला

मार्ग जरा सोचो तो उस व्यक्ति का क्या हाल होगा जो मेरा मांस खायगा ?'

जैन लोग हरित वनस्पति का न खाने का भी ध्यान रखते है। ईरानी मवि 'बकरी की दया को उस कोटि की न होने का कटु परिणाम उसका अकाल मरण बताता है जो ठीक है अब भला जो मांस खाय न उनका क्या हाल होगा ?

भ० महावीर की अहिंसा का प्रभाव ईरान से आगे फिलस्तीन मिश्र और यूनान तक पहुंचा था। फिलस्तीन में Essen एस्सेन नाम कट्टर अहिंसा वादी थे। मिश्र में भी शाकाहार का आश्रय लिया गया और यूनान में पिथागोरस ने भारतीय अहिंसा का सन्देश को फैलाया, उस सन् ८१ ई० में भृगुकच्छ के श्रमणाचार्य ने अथेन्स जाकर बलिदान बनाया था। सारांश यह कि भ० महावीर के अहिंसा सिद्धान्त की मान्यता उस समय सारे संसार में व्याप्त हो गई थी यह उनकी महानता का ज्वलन्त एक बड़ा प्रमाण है।

वीर वाणी और विश्वशांति।

भ० महावीर जब विहार करते पावापुर पहुंचे तो उन्होंने अन्तिम उपदेश यही दिया कि अहिंसा ही परम धर्म है। मेरे धर्म में श्रमण हैं। वे पूर्व, पश्चिम, उत्तर दक्षिण सभी दिशाओं में मैत्री और करुणा का सन्देश लेकर जावें। तीर्थंकर के अभाव में तीर्थंकर की वाणी तुम्हारा मार्ग दर्शन करेगा। और यह हम देख चुके हैं कि

म० महावीर की इस शिक्षा के अनु...
व बाहर दूर २ देशों तक गये थे और ...
विश्व में "अहिंसा साम्राज्य स्थापित" ...
म जदम्बु ने अहिंसा का उपदेश दिया ...
अहिंसा पर आर दिया पिलस्तीनम ...
न अहिंसा को जीवन में उतारा। ...
अहिंसा की धारा जो बहाई वह बराबर ...
जैन साधु प्राचीन काल में पहुंचे थे ...
पूर्ण प्रकाशगी हुई थी।

इस प्रकार वह -
था अहिंसा के मुख्य स्तम्भ म र्थे
बनकर विश्व में शान्तिरा
अहिंसाके द्वारा विश्वमें शांति

मानवीय सयय प।

मन की बिडम्बना म ६
है जिसके कारण व परस्पर
महावीर ने इस कमजोरी
अनेकान्त का सिद्धान्त दिया
अपने मत का आग्रह न करे
है एक व्यक्ति उसके एक
दूसरा दूसरे धम का।
दूसरे के मत का भी
स्थान ही नहीं रहता।

का आपस रहने में कभी भी झगड़ा होने की सम्भावना नहीं।

इसके साथ ही भ० महावीर ने मानव २ के बीच समता के लिए परस्पर दयामय व्यवहार करने और संयम पालन का उपदेश दिया। उन्होंने कहा था कि तुम बाहरी-शत्रुओं से क्यों लड़ते हो, अगर लड़ना है तो अपने अन्तर के शत्रुओं से लड़ो। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि दुष्प्रवृत्तियों को जीतो। मन, वचन और काय का सम-व्यवहार रक्खो तो तुम महान् बनोगे और तुम्हारा कोई शत्रु न होगा। ऐसे व्यक्तित्व में अहिंसा और समता पूर्ण रूप से विकसित होते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि उनके चारों तरफ मीलों तक शान्ति का साम्राज्य फैल रहता है जन्मजात विरोधी जीव भी अपना बैर भूल जाते हैं और परस्पर प्रेम से रहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आन्तरिक अहिंसा की इस महान शक्ति को जगाने में समर्थ है

वैशाली के वज्जि संघ के सेनापति सिंहभद्र ने भ० महावीर से पूछा कि प्रभु संसार में ऐसे क्रूर लोगों की बहुलता है जो विवेक को नहीं जानते। सत्य और असत्य को नहीं पहचानते, उनके जीवन का स्तर पशुओं की अवस्था से कम नहीं। वे लोग अहिंसा को क्या जानें ऐसे भयंकर लोगों के संसर्ग में एवं अहिंसक रहें तो कैसे रहें? कदाचित ऐसा ही कोई नगर से आततायी हमारे देश पर चढ़ आवे तो हम क्या करें? उत्तर स्पष्ट था — कि

अहिंसा का आचरण करो। जब हिंसक अपनी हिंसा नहीं छोड़ता तो अहिंसक प्राणी अहिंसा क्यों छोड़े? आत्मा स्वयं अमूर्त है और जीवन में चलना आत्मा का स्वभाव, अजर, अमर है फिर मरनेका भय क्या? अहिंसक विवेकी निडर और निशंक होता है। उसकी अहिंसा शत्रु को मित्र बना लेती है कदाचित् कोई जन से अथवा किसी के देश या सम्पत्ति को लूटने पर ही तुला हो तो भी अहिंसक वीर को अहिंसा के द्वारा ही उसका प्रतिकार करना उचित है उससे बैर न कर उसे प्रभावित करना ही उचित है परन्तु उसके अन्याय पूर्ण आदेश को कभी नहीं मानना चाहिए। भ० महावीर की वाणी में यही विशेषता है कि वह शत्रु को भी मित्र बनाने की कला सिखाती है। इसके लिए सच्ची वीरता निर्भयता और त्याग, तप, अपेक्षित है इस युग में महात्मा गांधी ने अहिंसा की अजेय शक्ति का पाठ जन जन को पढ़ाया था और भारत वासियों में अहिंसा का ऐसा वीर भाव जगाया कि भारत स्वतन्त्र होकर रहा। वास्तव में यदि यह शक्ति भारत में नहीं होती तो किसीका साहस न होता कि उसकी ओर आँख उठाकर भी देखता।

सेनापति सिंहभद्रने आगे फिर प्रश्न किया कि भगवन् अहिंसाका आदर्श जो आपने बताया वह निःसन्देह महान् है, जीवमात्र के लिए कल्याणकारी है। किन्तु दुर्भाग्य से यदि किसी देश या राष्ट्र में ऐसे महान् अहिंसक वीर न हों तो क्या किया जाय किस तरहसे आततायी आक्रमणकारी दुश्-

का सामना किया जाय ? और उसका जो उत्तर पाया उसमें भी अहिंसा की गंध आ रही थी। जीव की हत्या करना या मारना सरासर हिंसा है। युद्ध में हिंसा ही होती है परन्तु समारंभ स्वार्थी हिंसकों की कमी नहीं है। इसलिए अपना और अपने धर्म देश की रक्षा करना मानव का धर्म है हिंसा संकल्प करके अर्थात् जान बूझकर करना किसी के लिए भी विधेय नहीं है। परन्तु जीवन व्यवहार को चलाने के लिए घर गृहस्थी में आरम्भ उद्योग धंधों के द्वारा अर्थोपार्जन में उद्योगों और जीवन को सुरक्षित एवं धर्मानुकूल बनाये रखने के लिए अनाय निमित्त वृत्ति के संघर्ष से बचने के लिए विरोधी हिंसा करनी होती है परन्तु इनमें भी मानव को ध्यान रखना आवश्यक है कि कम से कम हिंसा हो मानव का लक्ष्य इनमें भी अहिंसक ही रहे। वैशाली के युद्ध में महाशिला और रथमूसल नामक अस्त्रों का प्रयोग किया गया था— पहले यन्त्र के द्वारा शिलाओं का प्रहार करके शत्रु का नाश किया जाता और दूसरा अस्त्र एक प्रकार का रथ था जिसमें न घोड़े जुते थे और न कोई चलाने वाला आदमी बैठता था उसमें ऐसी मशीन लगी होती थी कि जिससे वह अपने आप चलता था और मूसलों का प्रहार करके शत्रुओं की पंक्ति में खलबली मचा देता था। जब उज्जैन के किले को शकों ने घेर लिया तो भारतीयों ने एक अस्त्रों का प्रयोग किया जिनका आकार गर्दभ जैसा होता था और जिनसे एक भयंकर आवाज़ ऐसी निकलती

थी कि जिसको सुनकर शत्रु बेहोश हो जाते थे और आखिर पकड़ लिये जाते थे। सारांश यह है कि भ० महावीर की अहिंसा ने देश के राष्ट्रीय जीवन को भी एक नई मोड़ दी थी। शत्रु को उसकी गल्ती का पाठ पढ़ाना भी अहिंसक वीर अपना कर्तव्य समझते थे। परन्तु घृणा और विरोध का भाव नहीं रखते थे युद्ध क्षेत्र में भी उनके भाव अहिंसा में लीन रहते थे। सेनापति चामुण्डराय एक महान् योद्धा थे जिन्होंने चौरासी युद्ध लड़े परन्तु उसी समय वह ६३ शलाका पुरुष चरित्र भी लिखते जाते रहे उनकी आत्मा में अहिंसा बसी थी। ऐसे ही सोलंकियों के राज में श्री आभू थे। आभू जैन श्रावक थे जब राजा राजधानी में नहीं थे तब शत्रु ने अणहिलपुर पट्टन पर आक्रमण कर दिया। आभू ने बहादुरी से लड़कर शत्रु को मार भगाया परन्तु जब सामायिक करने का समय आता तो युद्ध स्थल में हाथी के हौदे में बैठे हुए ध्यान करने लगजाते शत्रुओं के मारो में घबड़ाते न थे। यह विशेषता थी भ० महावीर के अहिंसक वीरों की! आज भी हम इस वीर भाव को सारे विश्व में जगा देना है शत्रुता का अंत हो जावे और विश्व में शान्ति स्थापित हो क्योंकि वैर से वैर कभी नहीं मिटता मैत्री और करुणा से ही मानव के मन में, घर में, नगर में, देश में और विश्व में शान्ति और सुख की धारा बहती है। अतः आज प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्य को पहचाने और शक्ति एवं अहिंसा और मैत्री एवं करुणा को अपने जीवन में

महावीर-वचनामृत

समस्त जीवों को अपना अपना जीवन प्रिय है, सुख प्रिय है, वे दुख नहीं चाहते वध नहीं चाहते, सब जीने की इच्छा करते हैं (अतएव सब जीवों की रक्षा करनी चाहिए)।

सब जीव जीना चाहते हैं, कोई भी मरना नहीं चाहता अतएव निग्रंथ मुनि भयंकर प्राणिवध का परित्याग करते हैं।

अपने अथवा दूसरे के लिए क्रोध अथवा भय से, दूसरे को पीड़ा पहुंचाने वाला असत्य वचन न स्वयं बोलना चाहिये और न दूसरों से बुलवाना चाहिए।

मारक ज्ञातृपुत्र महावीर ने मात्र वस्त्र आदि पदार्थों को ही परिग्रह नहीं कहा बल्कि वास्तविक परिग्रह है मूर्छा आसक्ति, यह महर्षि का वचन है।

जो मनुष्य सुन्दर और प्रिय भोगों को पाकर भी उनकी ओर से पीठ फेर लेता है सामने आये हुए भोगों का परित्याग कर देता है वही त्यागी कहलाता है। वस्त्र, गंध अलङ्कार, स्त्री शयन आदि वस्तुओं का जो परवशता के कारण उपभोग नहीं करता उसे त्यागी नहीं कहते।

विविध वस्तुओं से परिपूर्ण समस्त विश्व भी यदि किसी एक मनुष्य को दे दिया जाय तो इससे भी उसकी तृप्ति नहीं होती मनुष्य की तृष्णा को पूरी करना कितना कठिन है!

कैलाश पर्वत के समान सोने चाँदी के असंख्य पर्वत भी लोभी मनुष्य की इच्छा पूरी नहीं कर सकते उसकी इच्छा आकाश के समान अनन्त है।

शान्ति से क्रोध को जीतें नम्रता से अभिमान जीतें सरलता से माया को जीतें, और संतोष से लोभ को जीतें।

सब प्रथम अपने आप का दमन करना चाहिए यही सबसे कठिन काम है, अपने आप को दमन करने वाला इस लोक में तथा परलोक में सुखी होता है।

हे पुरुष! तू स्वयं ही अपना मित्र है फिर बाहर किसी मित्र को क्यों खोज करता है। ? तू अपने आप का निग्रह कर इससे तू समस्त दुखों से मुक्त हो जायगा।

जब तक वृद्धावस्था पीड़ा नहीं पहुंचाती, व्याधि नहीं बढ़ती और इन्द्रियाँ क्षीण नहीं होतीं तब तक धर्म का आचरण करना चाहिए।

जागो! तुम क्या नहीं समझते हो ? मृत्यु के बाद ज्ञान होना दुर्लभ है। बीती हुई रात्रियाँ लौट कर नहीं आतीं, और फिर से मनुष्य जन्म पाना सुलभ नहीं है।

प्रमादी पुरुष धन द्वारा न इस लोक में अपनी रक्षा कर सकता है, न परलोक में। फिर भी धन के असीम मोह से जैसे दीपक बुझ जाने पर मनुष्य मार्ग को ठीक २ नहीं देख सकता उसी प्रकार प्रमादी मनुष्य न्याय-मार्ग को देखते हुए भी नहीं देखता।